LL.B.4.Sem.
Unit.2.3.and4.

INTERPRETATION OF STATUTES.

By.Banshlochan.Prasad.

Scanned with CamScanner

(1) साहचर्येण ज्ञायते-नॉसिटर अ सोसायस
(NOSCITUR A SOCIIS)

तात्पर्य

नॉसिटर अ सोसायस एक लैटिन शब्दावली–सूत्र है। नॉसिटर का अर्थ है–ज्ञात करना या जानना और सोसायस का अर्थ है–साहचर्य या संगति। इस प्रकार, नॉसिटर अ सोसायस का शाब्दिक अर्थ है–साहचर्य से ज्ञात करना। लार्ड मेकमिलन के अनुसार, किसी शब्द का अर्थ उसके साथ प्रयोगित अन्य शब्दों की संगति के द्वारा निश्चित करना चाहिये। The meaning of a word is to be judged by the company it keeps.[1]

"*Words and Phrases*"[2] में इस सूत्र को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

Scanned with CamScanner

1. नॉसिटर सोसायस सूत्र का प्रयोम तभी करना चाहिये जब प्रयोगित शब्दों में विधायी आशय संदिग्ध हो। यदि विधानमंडल ने निसन्देह और स्पष्टतः साधारण शब्दों का प्रयोग किया है तो उसका सरल–सपाट व्यापक अर्थ ही विधायी आशय निर्वचित किया जाना चाहिये। ऐसी स्थिति मे नॉसिटर अ सोसायस सूत्र का प्रयोग नही करना चाहिये। क्योंकि इस सूत्र का उद्देश्य केवल कानून के शब्दों की अनाशयतित व्यापकता को रोकना है। (अर्ल ऑफ हाल्सबरी एल0सी0. इन कॉरपोरेशन ऑफ ग्लॉसगो v ग्लॉसगो ट्रॉमबे एण्ड ओमनिबस कं0 लि0 1898)।[4]

2. जब तक आप शब्द–समाज और उसके साहचर्य (Socii societas) को ठीक से नहीं समझते, तब तक इस सूत्र का प्रयोग नहीं करना चाहिये। अन्यथा यह विश्वासघाती सिद्ध हो सकता है।

3. नॉसिटर अ सोसायस सूत्र मशीनी प्रयोग के लिये नहीं है। यह सामान्य ज्ञान का या कानून की भाषा के शब्दों का युक्तियुक्त प्रयोग का नियम मात्र है। यह निर्वचन का 'सामान्य सिद्धान्त' नहीं है। यह शाब्दिक–व्याकरणीय निर्वचन नियम मे सुधार का उसकी कठोरता को नम्य करने वाला उसी का सहायक नियम है।

4. *नॉसिटर अ सोसायस और एजुस्डेम जेनेरिस सूत्रों का आपसी सम्बन्ध और अन्तर* का ध्यान रखना चाहिये। पहला एक व्यापक तो दूसरा उसका एक 'प्रकार' सजाति मात्र है। (बम्बई राज्य v अस्पताल मजदूर सभा 1960, ओसवाल ऐग्रो मिल्स लि0 v सी0सी0ई0 1993)[5] दोनों सूत्र तब लागू होते हैं जब प्रावधान में एक जैसे अर्थ वाले साधारण और विशिष्ट शब्दों का प्रयोग हुआ हो परन्तु उनका विधायी आशय संदिग्ध हो; दोनों ही साधारण शब्द के व्यापक अर्थ को सीमित–संकुचित करते हैं; दोनों ही निर्वचन के सामान्य सिद्धान्त नहीं हैं; दोनों ही का मशीनी प्रयोग नहीं किया जाता; दोनों ही भाषायी शब्दों का युक्तियुक्त और सामान्य ज्ञान के नियम होने के नाते व्याकरणीय निर्वचन सिद्धान्त के सहायक नियम हैं; दोनों में मूलभूत अन्तर–यही है कि नॉसिटर अ सोसायस एक व्यापक नियम है तो एजुस्डेम जेनेरिस उसका एक प्रकार; ऐजुस्डेम जेनेरिस में दो या अधिक विशिष्ट शब्द एक ही प्रजाति–श्रेणी या वर्ग के होने चाहिये तद्पुरान्त साधारण शब्द का प्रयोग हुआ हो परन्तु नॉसिटर अ सोसायस में यह आवश्यक नही है कि विशिष्ट शब्द एक ही वर्ग या प्रजाति के हों; साथ ही इसमें साधारण शब्द का प्रयोग विशिष्ट शब्द के आगे–पीछे भी हो सकता है। एमबेटिलॉस v एन्टन जर्जेन्स मार्गेराइन वर्क्स 1923[6] में लार्ड केव एल0सी0 का कहना था कि "मैं किसी ऐसे अधिकारिक उद्धरण को नहीं

Scanned with CamScanner

जानता जहाँ प्रावधान साधारण शब्द से आरम्भ हुआ हो और वहाँ एजुस्डेम जेनेरिस लागू किया गया हो।" (अमर सिंह v राजस्थान राज्य 1955)[7]

आर० v हैरिस 1836[8] इस वाद में अन्तर्वलित पर्सन एक्ट 1837 किसी व्यक्ति को 'शूट, स्टैब, कट या बून्ड' करने को एक गम्भीर अपराध घोषित करता है। यहाँ साधारण शब्द 'वून्ड'–घायल को सीमित अर्थ प्रदान करते हुए कहा गया है कि यहाँ घायल का तात्पर्य किसी शस्त्र–हथियार से घायल करना है जैसे कि प्रावधान में पूर्व प्रयोगित शब्दों शूट (गोली से) स्टैब–कट (धारदार हथियार से) आशायित है। अतः यहाँ वे घाव शामिल नहीं हैं जो दांतों से अंगुली या नाक काट कर या तेजाब से चेहरा जला कर किये गये हों।

आर० v सैन्डर्स 1839[9]

इस वाद में 'कोई भी दूकान, गोदाम या कार्यालय में सेंध मारकर प्रवेश करना गम्भीर अपराध प्रावधानित था। यहाँ साधारण शब्द कोई भी दुकान से तात्पर्य केवल ऐसी दुकानों से लिया गया जहाँ बिक्री हेतु वस्तुयें–सामान रखा रहता है। इसमें कोई भी कर्मशाला–वर्कशॉप–जहाँ वस्तुओं का निर्माण होता है, को सम्मिलित नहीं किया गया।

पेन्जिले v बेल पंच क० लि० 1964[10]

इसमें फैक्ट्रीज एक्ट 1961 धारा 28(1) के अनुसार कारखाने के फर्श, सीढ़ियों के डन्डे, सीढ़ियाँ, रास्ते और गैंगवेज–मजदूरों के पंक्तियों में चलने के बीच के रिक्त स्थान अवरोध रहित रखे जायेंगे। साधारण शब्द फर्श का केवल सीमित अर्थ लगाते लार्ड डिपलॉक ने निवर्चित किया था कि यहाँ कारखाने के सभी फर्श न होकर केवल वे फर्श होंगे जहाँ से आने–जाने का मार्ग हो। वे ही अवरोध रहित रखे जायेंगे। फर्श में कारखाने के वे फर्श सम्मिलित नहीं हैं जिनका प्रयोग गोदाम के रूप में किया जाता है।

आई०आर०सी० v फ्रेरे 1965[11]

आयकर अधिनियम में ब्याज, वार्षिक या अन्य वार्षिक भुगतान शब्दावली में ब्याज का अर्थ वार्षिक ब्याज लगाया गया था।

म्यूर v की, 1875[12]

रिफ्रेशमेण्ट हाऊसेज एक्ट 1860 धारा (6) लोक जलपान, स्थल और मनोरंजन घरों से सम्बन्धित थी। यहाँ मनोरंजन घरों से तात्पर्य केवल जलपान कमरों से जुड़े स्वागत कक्ष एवं अन्य मनोरंजन सुविधाओं से लगाया गया। न कि विशुद्ध नाटक–संगीत घरों से।

Scanned with CamScanner

(2) सजाति नियम–एजुस्डेम जेनेरिस
(Ejusdem Generis)

तात्पर्य

लैटिन सूत्र एजुस्डेम जेनेरिस का शाब्दिक अर्थ है–उसी प्रकार या प्रकृति का। निर्वचन के इस सुस्थापित सूत्र के अनुसार, कानून के किसी प्रावधान में प्रयोगित 'साधारण शब्द' अपने पूर्ववर्ती एक ही वर्ग–कोटि–श्रेणी–प्रजाति या प्रकृति के विशिष्ट शब्दों जैसा सीमित अर्थ ग्रहण करता है। यह उपधारणा है कि यदि विधानमंडल का आशय साधारण शब्द को व्यापक अर्थ देना होता तो वह उसके पूर्व एक ही प्रजाति के कई विशिष्ठ शब्दों का उल्लेख नहीं करता। वस्तुत एजुस्डेम जेनेरिस भाषायी कौशल से शब्दों का वाक्यों में किस प्रकार प्रयोग किया जावे का एक प्रमाण है। इसलिये कानून के प्रारूपकारों को भी कानूनी वाक्य में शब्दों का प्रयोग करते समय इसका ध्यान रखना चाहिये।

सजाति नियम लागू करने की शर्ते

सदरलेण्ड के अनुसार[1], निर्वचन में एजुस्डेम जेनेरिस सूत्र प्रयोग के लिये सामान्यत निम्नांकित शर्ते होनी आवश्यक हैं। इनमें से किसी भी शर्त के विद्यमान न होने पर एजुस्डेम जेनेरिस नियम लागू नहीं होगा।

1. प्रावधान में कई विशिष्ट शब्दों का उल्लेख हो,
2. ये विशिष्ट शब्द एक ही वर्ग–जाति के हों,
3. इन विशिष्ट शब्दों की जाति–श्रेणी समाप्त–परिपूर्ण न हुई हो,
4. विशिष्ठ शब्दों के उपरान्त किसी साधारण शब्द का प्रयोग किया गया हो,
5. और विधानमंडल ने आशय स्पष्ट न किया हो कि प्रयोगित साधारण शब्द को सरल–व्यापक अर्थ दिया जावे। (अमर चन्द्र चक्रवर्ती v. उत्पाद शुल्क कलेक्टर 1972[2] उ0प्र0 राज्य विद्युत बोर्ड v. हरीशंकर 1979; यूनाइटेड टाऊन्स इलेक्ट्रिक कं0 v. ए0जी0 न्यू फाउन्डलैण्ड 1939 ।[3]

दूसरे शब्दों में कहा जाये तो कानून के प्रावधान में लगातार–एक के बाद एक दो या अधिक विशिष्ट शब्दों का प्रयोग हो। यदि विशिष्ट शब्द एक ही है या दो या अधिक शब्दों का लगातार प्रयोग नहीं है तो न पंक्ति बनती है ओर न ही श्रेणी। एक विशिष्ट शब्द या ऐसी प्रजाति जिसकी किस्म ही एक हो, वर्ग नहीं बना सकता। विशिष्ट शब्दों की श्रेणी पूरी न हुई हो। व अधूरी ही हो अर्थात उसी प्रजाति के एकाध विशिष्ट शब्द और जोड़ने की गुंजाइश हो।

Scanned with CamScanner

तद्उपरान्त (पहले नहीं) किसी साधारण शब्द का प्रयोग किया गया हो जैसे कि अन्य, जो कोई भी, व्यक्ति–वस्तु–स्थान–'उत्पाद', कार्यवाही 'अन्यथा', 'अन्य प्रकार के', 'अन्य मामलों में', 'इत्यादि'–any other person goods-place-production, proceeding other wise, any other form, whatsoever, in any case, etc. विधानमंडल का ऐसे साधारण शब्द को व्यापक अर्थ देने का आशय स्पष्ट न हो तो एजुस्डेम जेनेरिस सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है। एजुस्डेम जेनेरिस सूत्र के प्रयोग–अप्रयोग का उदाहरण न्यायाधीश एस्किस्थ ने ऐलन v एमरसन 1944[4] में दिया है जिसका उल्लेख भारतीय उच्चतम न्यायालय ने जगदीश चन्द्र v काजोरिया ट्रेडर्स[5] में किया है। यदि प्रावधान में यह लिखा हो–पुस्तकें, पेम्फलेट, समाचारपत्र एवं अन्य दस्तावेज तो सजाति नियम लागू किया जा सकता है और साधारण शब्द "अन्य दस्तावेज" का अर्थ भी पुस्तकें, पेम्फलेट, समाचार पत्र जैसे विशिष्ट शब्दों की भांति सीमित हो जायेगा। उसमें "निजि पत्र" सम्मिलित नहीं होंगे। दूसरी तरफ यदि यह लिखा हो–समाचार पत्र या अन्य दस्तावेज शत्रु को गोपनीय सूचना प्रकट कर सकते हैं, तो सजाति नियम लागू नही होगा। यहाँ साधारण शब्द 'अन्य दस्तावेज' का व्यापक अर्थ ही ग्रहण किया जायेगा और "निजीपत्र" उसमें सम्मिलित माने जायेंगे। इसमें दो या अधिक विशिष्ट शब्दों का उल्लेख नहीं है और अकेला विशिष्ट शब्द 'समाचार पत्र' श्रेणी नही बना सकता। अतः जगदीश चन्द्र वाद मे एजुस्डेम जेनेरिस का प्रयोग नही किया गया। उसमें अन्तवर्लित प्रावधान में भी केवल दो शब्द 'मुजराई एवं अन्य कार्यवाहियाँ Set off and other peoceedings का उल्लेख था। न कोई विशिष्ट शब्द न उनकी, प्रजाति थी। ऐलन वाद में अभिव्यक्ति 'थियेटर्स और मनोरंजन के अन्य स्थल' भी कोई वर्ग गठित नहीं करती।

एजुस्डेम जेनेरिस और नॉसिटर अ सोसायस सूत्रों में समानतायें या असमानतायें (नॉसिटर अ सोसायस अध्याय में पढ़ें पृ0 131)

सजाति नियम प्रयोग के उदाहरण

सेन्डीमेन v ब्रीच 1827, (री v वलीवर्थ 1864, पामर v स्नो 1900,[6]) वाद में, सनडे अब्जरवेन्स एक्ट 1677 मे प्रावधान था कि ईश्वर के दिन–रविवार को कोई भी व्यापारी, शिल्पी, कर्मकार, श्रमिक या अन्य व्यक्ति चाहे जो भी हो' अपना सामान्य श्रम, व्यापार या कार्य नहीं करेगा। निर्वचन में एजुस्डेम जेनेरिस सूत्र को ध्यान मे रखते हुये साधारण शब्दावली 'अन्य व्यक्ति चाहे जो भी हो' में भिन्न प्रजाति के शब्द क्रमशः तांगेवाला, किसान या नाई को सम्मिलित नहीं माना गया।

क्लॉर्क v गेस्कार्थ 1818[7]

डिस्टेस फोर रेन्ट एक्ट 1737 की धारा 8 समर्पित भूमि पर उगे सभी प्रकार के अन्न,

घास, लतायें, जड़ें, फल, दलहन या अन्य जो भी उत्पाद हो, की मालगुजारी हेतु कुर्की के लिये अधिकृत करती थी। यह निर्वचित किया गया कि उक्त उत्पादनों से भिन्न नर्सरी में उगे वृक्ष और झाड़ियां 'अन्य जो भी उत्पाद हो' शब्दावली में सम्मिलित नहीं होगी। क्योंकि यहाँ वे विजातीय हैं।

ए0जी0 v ब्राऊन 1920 [8]

किंग इन कौंसिल कस्टम एक्ट 1876 धारा 43 के द्वारा हथियार, गोली, गोला–बारूद या अन्य कोई वस्तु' के आयात के निषिद्धि का आदेश दे सकता था। यहाँ 'अन्य कोई वस्तु' से तात्पर्य सभी वस्तुयें न होकर केवल हथियार–गोलाबारूद जैसी सजातीय वस्तुयें ही होनी चाहिये।

री लाथम मृतक 1962 [9]

फाईनेन्स एक्ट 8 (4) के अनुसार, मृत्यु उपरान्त मृतक की सम्पत्ति प्रत्येक न्यासी, संरक्षक समिति या अन्य व्यक्ति जिसका सम्पत्ति में हित हो, को अन्तरित होगी। सजाति नियम लागू करते हुये न्यायाधीश विल्बरफोर्स ने निर्वचित किया कि यहाँ साधारण शब्द अन्य व्यक्ति में हित–लाभकारी व्यक्ति सम्मिलित नहीं होगा। केवल वैश्वासिक सम्बन्ध वाले सजातीय व्यक्ति ही सम्मिलित होंगे।

एक्सप्रेस होटेल्स प्रा0लि0 v गुजरात राज्य 1989 [10]

गुजरात (होटल और आवास) विलासिता प्रभार अधिनियम 1977 धारा 2(क) के अनुसार होटेल में रूकने पर विलासिता प्रभार–कर वातानुकूल, टेलीफोन, टेलीविजन, रेडियो, संगीत, अतिरिक्त बिस्तर और 'अन्य इसी प्रकार की वस्तुओं पर देय था। उच्चतम न्यायालय के अनुसार साधारण–व्यापक शब्दावली–अन्य इसी प्रकार की वस्तुयें का सजाति अर्थान्वयन करना उचित है। वही विधायी आशय है।

मे0 सिद्धेश्वरी कॉटन मिल्स प्रा0लि0 v भारतसंघ 1989 [11]

केन्द्रीय उत्पाद शुल्क (आबकारी एवं नमक) अधिनियम 1944 धारा 2(च)(V) के अनुसार उत्पाद मे–विरंजन, वस्त्रव्यापार, रंगाई, मुद्रण, जलसह बनाना, रबड़ीकरण, संकुचन द्वारा "अथवा अन्य कोई प्रसंस्करण सम्मिलित हैं। उच्चतम न्यायालय ने निर्वचित किया कि यहाँ अभिव्यक्ति *अथवा अन्य कोई प्रसंस्करण–का तात्पर्य* एवं सम्बन्ध पूर्व उल्लिखित घटनाओं से है जिसमें रसायन द्वारा या अन्य ढंग से ऐसा परिवर्तन करना है जो कपड़ों को पर्याप्त समय तक टिकाऊ रख सकें।

हाऊसिंग बोर्ड, हरियाणा v कामगार यूनियन 1996 [12]

हरियाणा हाऊसिंग बोर्ड अधिनियम की धारा 2(च) इस प्रकार है नगरपालिका, ग्राम पंचायत, पंचायत समिति, जिला परिषद एवं अन्य स्थानीय प्राधिकारी।" उच्चतम न्यायालय ने

Scanned with CamScanner

उक्त संस्थाओं को एक ही वर्ग–श्रेणी की मानते हुये अन्य स्थानीय प्राधिकारी में हाऊसिंग बोर्ड को भी सम्मिलित माना।

तमिलनाडु राज्य v शिवरासन 1997 [13]

आतंकवादी और विध्वंसक कृत्य निवारण अधिनियम धारा 5 में बम, डायनामाइट एवं अन्य विस्फोटक पदार्थ का उल्लेख है। उच्चतम न्यायालय के अनुसार अन्य विस्फोटक पदार्थ बम–डायनामाइट की श्रेणी के ही होने चाहिये जिनसे सीधे विस्फोट किया जा सके जैसे कि सरेस छड़ी–gelatine sticks. । परन्तु कारतूस या बमों के खाली खोल या बम बनाने के पुर्जे मात्र विस्फोटक नहीं हो सकते जब तक कि उनमें बारुद आदि भरकर बम का रूप न दे दिया जावे।

वाद जिनमें सजाति नियम लागू नहीं किया गया

उज्जमबाई v उ०प्र० राज्य 1962

इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड राजस्थान v मोहन लाल 1967

जी टेलिफिल्म्स लि० v भारतसंघ (2005) [14]

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 12 के अनुसार राज्य शब्द में भारत सरकार, संसद, राज्यविधान मण्डल, राज्य सरकार, राज्य क्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियन्त्रण के अधीन सभी स्थानीय और "अन्य प्राधिकारी" सम्मिलित हैं। उच्चतम न्यायालय ने उक्त वादों में सजाति नियम को लागू नहीं किया क्योंकि राज्य के उपरोक्त उल्लिखित प्रतीक एक ही वर्ग के नहीं हैं। केन्द्र, राज्य, वा स्थानीय प्राधिकारी भिन्न–भिन्न वर्ग या श्रेणी के हैं।

लीलावती v बम्बई राज्य 1957 [15]

इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने बम्बई भूमि अधिग्रहण 1948 की धारा 6(4) के स्पष्टीकरण में स्थान 'खाली' तब माना जायेगा जब "किरायेदारी की समाप्ति, बेदखली या समनुदेशन पर अधिभोग की समाप्ति या अन्य प्रकार से हित अन्तरण अथवा अन्यथा" शब्दों को एक ही श्रेणी का नहीं माना।

हमदर्द दवाखाना v भारतसंघ 1965 [16]

फल उत्पाद आदेश 1955 के खंड 2(घ)(V) में "शरबत, पेराई, पल्प, जौजल, सीलबन्द फल रस, परोसने हेतु तैयार पेय अथवा अन्य पेय जिसमें फलों का रस या लुगदी सम्मिलित है," का उल्लेख है। न्यायालय ने इन्हें भी एक ही वर्ग के शब्द नहीं माने और सजातीय सूत्र लागू नहीं किया।

लोकमत न्यूजपेपर्स प्रा० लि० v शंकर प्रसाद 1996 [17]

उच्चतम न्यायालय ने यहाँ भी सजाति सूत्र लागू नही किया क्योंकि महाराष्ट्र श्रमिक संघ (मान्यता एवं अनुचित श्रमप्रथा निवारण) अधिनियम 1971 के परिशिष्ट (IV) मद (1) में उल्लिखित दो शब्द –"सेवामुक्ति और बरखास्तगी" थे। पहला साधारण तो दूसरा विशिष्ट शब्द है। सेवामुक्ति दंडनीय और बिना दंडस्वरूप के भी की जा सकती है। जबकि बरखास्तगी हमेशा

Scanned with CamScanner

(3) सामान्य उपबन्ध विशिष्ट उपबन्ध को निराकृत नहीं करते जनरेलिआ स्पेशिली बस नॉन डेरोगेन्ट (Generalia speciali bus non derogant)

तात्पर्य

लैटिन सूत्र जनरेलिआ स्पेशिली बस नॉन डेरोगेन्ट निर्वचन में एक बाह्य सहायक के रूप में सुस्थापित उपधारणा है। इसके अनुसार,

एक ही विषय पर युक्तियुक्त रूप से प्रयोगनीय,

कोई पश्चातवर्दी *साधारण–कानून,* सिद्धान्त, उपबन्ध या शब्द, *अप्रत्यक्षतः*

पूर्व के विशिष्ट वा स्पष्ट कानून, उपबन्ध या शब्द को निरसित, परिवर्तित, अल्पीकृत या निराकृत नहीं करता।

दूसरे शब्दों में, यदि नये सामान्य उपबन्ध और पुराने विशिष्ट उपबंध में विरोधाभास हो तो पुराना विशिष्ट उपबन्ध नये सामान्य उपबन्ध पर अभिभावी होगा। इस सूत्र के पीछे तर्क यह है कि संसद ने पूर्व–पुराने विशिष्ट कानून को विषय विशेष पर ध्यानपूर्वक निर्मित किया है और नये सामान्य कानून द्वारा उसे *स्पष्टतः* निरसित या परिवर्तित नहीं किया है। यदि संसद स्पष्टतः पुराने विशिष्ट कानून को निरसित कर देती है तो यह सूत्र लागू नहीं होगा। (दी वेरा क्रुज वाद में अर्ल ऑफ सेलबोर्न, ब्रिजवाद में विस्काउन्ट हैल्डेन और बार्कर v. एडगर में लार्ड हबाउस के कथनों के सार के अनुसार)।

वाद उदाहरण

सिवार्ड v. दी वेरा क्रुज 1884 '

इस वाद में बाद का एडमिरल्टी कोर्ट अधिनियम 1861 धारा–7 एडमिरल्टी न्यायालय को 'किसी भी जहाज द्वारा की गई क्षति सम्बन्धित किसी भी दावे पर' अधिकारिता प्रदान करती थी। दूसरी ओर, पूर्व का फैटल एक्सिडेन्ट अधिनियम 1846 प्राणघातक दुर्घटनाओं में मृत्यु पर क्षतिपूर्ति दावों से सम्बन्धित था। इस पूर्व अधिनियम को न्यायालय ने एक विशेष वर्ग के दावों से सम्बन्धित कानून निर्वचित किया जिसे पारित करते समय विधान मंडल के मस्तिष्क में कई महत्वपूर्ण विचार होंगे जो बाद के सामान्य एडमिरल्टी कोर्ट एक्ट पारित करते समय नहीं भी होंगे। अतः ऐसे विरोधाभासों में यह अर्थ नहीं लगाना चाहिये कि बाद के एडमिरल्टी एक्ट ने पूर्व–पुराने फैटल एक्सिडेन्ट अधिनियम को निरसित, परिवर्तित या अल्पीकृत कर दिया है।

Scanned with CamScanner

आर v. हैल्थ मिनिस्टर 1936 [2]

इस वाद में यह निर्वचित किया गया कि लंदन ओपन स्पेस अधिनियम 1893 जो लंदन काउन्टी कौंसिल पर यह दायित्व आरोपित करता था कि वह लंदन में हैकने दलदल भूमि को एक खुले क्षेत्र के रूप में बनाये रखे, हाउसिंग अधिनियम 1925 द्वारा अप्रत्यक्षतः निराकृत नहीं हुआ है। यह बाद का हाउसिंग एक्ट सामान्यतः सभी स्थानीय प्राधिकारियों को भवन निर्माण हेतु 'कोई भी भूमि' अर्जित करने का अधिकार देती थी। लंदन कौंसिल का दायित्व अपने स्थान पर कायम रहेगा। इसी आधार पर हम कह सकते हैं कि पूर्व विशिष्ट स्थानीय कानून बाद के सामान्य कानूनों द्वारा अप्रत्यक्षतः समाप्त नहीं माने जायेंगे।

पारादीप पोर्ट ट्रस्ट v. वर्कमेन 1977 [3]

जनरेलिया स्पेशिली बस नॉन डेरोगेन्ट के आधार पर उच्चतम न्यायालय ने निर्वचित
किया कि बाद का सामान्य एडवोकेट्स एक्ट 1961 जो एक अधिवक्ता को "सभी न्यायालयों और
अधिकरणों में वकालात करने का अधिकार देता है, 1947 के विशिष्ट औद्योगिक विवाद
अधिनियम पर अभिभावी नहीं होता है। इसके अन्तर्गत उत्पन्न विवादों में अधिवक्ताओं को
वकालत की अनुमति नहीं होगी।

यू0पी0से0ब0 v. हरिशंकर जैन 1978 [4]

इस वाद में दो विद्युत वितरक कर्मी उ0प्र0 बिजली सप्लाई अधिनियम 1948 के रेगुलेशन
द्वारा 58 वर्ष की आयु पर अनिवार्यतः सेवानिवृत कर दिये गये। परन्तु औद्योगिक प्रतिष्ठान
(स्टेन्डिंग आरडर्स) अधिनियम 1946 में अनिवार्य सेवा निवृति की आयु सम्बन्धित कोई प्रावधान
नहीं था। विद्युत कर्मियों ने अपनी सेवा निवृति को चुनौती दी। उच्चतम न्यायालय ने निर्वचित
किया कि औद्योगिक प्रतिष्ठान अधिनियम एक विशिष्ठ अधिनियम है। यह स्पष्टतः और अनन्य
रूप से औद्योगिक प्रतिष्ठानों में काम करने वाले कर्मियों की सेवा शर्तों को सूचीबद्ध करता है।
जब संसद ने बिजली सप्लाई अधिनियम पारित किया तब स्वाभाविक रूप से उसके समक्ष
स्टेन्डिंग आदेश अधिनियम नहीं होगा। अतः यह अर्थ नहीं निकलता कि बिजली सप्लाई अधि-
ानियम ने स्टेन्डिंग आदेश अधिनियम को निरसित कर दिया है। इसलिये यहाँ पूर्व का विशिष्ठ
स्टेन्डिंग आदेश अधिनियम का प्रावधान बाद के बिजली सप्लाई अधिनियम के प्रावधान 79(C)
पर अभिभावी होगा। "जनरेलिआ स्पेशिलीबस नॉन डेरोगेन्ट–जिसका अर्थ है कि सामान्य प्रावधान
एक विशिष्ट प्रावधान के समक्ष झुकेगा, इस तर्क पर आधारित है कि विशिष्ट अधिनियम को पारित
करते समय संसद अपनी समस्त विचार–शक्ति एक विशेष विषय पर केन्द्रित करती है। उसके बाद
जब कोई सामान्य अधिनियम पारित किया जाता है तो स्वाभाविक रूप से यह उपधारित किया
जाता है कि संसद ने पूर्व विशिष्ट अधिनियम को निरसित या रूपान्तरित नहीं किया है जब तक
कि ऐसा प्रतीत न हो कि संसद ने विशिष्ट अधिनियम पर पुनः विचार किया हो।"

Scanned with CamScanner

(4) एक वस्तु का स्पष्ट उल्लेख उसी प्रकार की अन्य वस्तुओं का अपवर्जन है

एक्सप्रेसिओ यूनिअस एस्ट एक्सक्लूसियो अल्टीरियस

(Expressio unius est exclusio alterius)

मैक्सवेल के अनुसार,[1] इस लैटिन सूत्र के अनुसार, किसी प्रावधान में किसी विशिष्ट–वर्ग–श्रेणी की एक या अधिक वस्तुओं का स्पष्ट उल्लेख उसी वर्ग की अन्य वस्तुओं का चुपचाप अपवर्जन कर सकता है। अर्थात्, स्पष्ट अभिव्यक्ति अप्रत्यक्ष अनुमानों को निषेध करती है–expressum facit cessare tacitum। आगे, एक कानून में जहाँ ऐसे दो शब्दों या अभिव्यक्तियाँ हों जिनमें से एक सामान्यतः दूसरे को अपने में सम्मिलित करता हो तो अधिक व्यापक शब्द दूसरे कम व्यापक शब्द के अपवर्जन के रूप में ग्रहण–निर्वचित किया जाता है। उदाहरण के लिये, यदि किसी प्रावधान में गायें, भेड़ें और घोड़े शब्दों के साथ बछिया, मेमने और टट्टू शब्दों का प्रयोग हो तो अन्तिम तीनों शब्दों को अपवर्जित निर्वचित किया जायेगा। मानों वे प्रावधान में है ही नहीं क्यों कि पहले तीन शब्दों में ही अन्तिम तीनों शब्द क्रमशः सम्मिलित माने जाते हैं (आर0 v कुक 1774)[2]। इसी प्रकार, सामान्यतः 'भूमि' शब्द में भवनों की भूमि भी सम्मिलित है। परन्तु जहाँ कानून 'घरों, भवनों, कार्यस्थलों, किराये के मकानों और पैतृक रिहाइसों पर कर लगाते हुये 'भूमि' को कर से छूट प्रदान करता हो तो यहाँ भूमि से तात्पर्य केवल उस भूमि से है जिस पर घर, मकान कार्यस्थल न खड़े हों–उनसे भारित न हो। (आर0 v मिडलैण्ड रेल्वे कं0 1855)[3] ब्रिटिश पुअर रिलीफ एक्ट 1601 की धारा–1 भूमियों, घरों दशमांश–(टाइट्स) और कोयलाखानों के अधिवासियों पर पुअर टैक्स लगाता था। यद्यपि सामान्यतः भूमियों शब्द में सभी प्रकार की भूमियाँ सम्मिलित हैं परन्तु यहाँ कोयलाखान का स्पष्ट उल्लेख अन्य प्रकार की खानों को वहिष्कृत कर रहा है। (आर0 v सिजले के निवासी 1831)[4]

टेलर v *टेलर*, 1876 *और नर्बदा प्रसाद* v *छगन लाल* 1969[4A] वादों में कहा गया है कि जहाँ कानून किसी कार्य को स्पष्टतः निर्धारित तरीके के द्वारा करने का उल्लेख करता है तो उस कार्य को अन्य विवक्षित उपधारित तरीके से करने को निषेध, बहिष्कृत–अपवर्जित करता है।

खेमका एण्ड कं0 v *महाराष्ट्र राज्य 1975*[5]

इस वाद में केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम 1956 की धारा 9(2) के अनुसार केन्द्र के लिये राज्य अधिकारियों को विक्रय कर निर्धारण, पुनःनिर्धारण वसूल करने वा आर्थिक दंड आरोपित करने की वैसी ही शक्तियाँ प्राप्त होंगी जैसी केन्द्रीय अधिनियम या राज्य के विक्रय कर अधिनियम में हैं। न्यायाधीश बेग के अनुसार,, यहाँ एक्सप्रेसियो यूनियस सूत्र लागू होगा और

Scanned with CamScanner

राज्य विक्रय कर अधिनियम का उल्लेख अपवर्जित किया जाता है। अर्थात दोनों अधिनियमों में आर्थिक दंड आरोपित करने वाले प्रावधान विशिष्ट है। अतः केन्द्रीय कानून राज्य कानून का अपवर्जन करता है।

कॉल्कहॉन v. ब्रुक्स 1888 ***Colquhoun v. Brooks***[6]

इस वाद में एक कानून की एक धारानुसार इंग्लैण्ड में निवास कर रहे किसी व्यक्ति की सम्पत्ति जो इंग्लैण्ड में हो या बाहर विदेश में और जो इंग्लैण्ड या विदेश में किसी व्यापार वृत्ति, सेवा या धन्धे से अर्जित हो, के वार्षिक लाभ पर कर आरोपण होता था। उसी कानून की दूसरी धारानुसार, विदेशी प्रतिभूतियां के ब्याज पर कर तभी आरोपित होगा जब वह ब्याज वास्तव मे इंग्लैण्ड में प्राप्त किया गया हो। एक्सप्रेसियो यूनियस सूत्र की दलील के आधार पर राज्य उस व्यक्ति पर कर आरोपित करना चाहता था जो साझेदारी में ऑस्ट्रेलिया में व्यापार करता था और ऑस्ट्रेलिया में ही व्यापार का वार्षिक लाभांश जमा रखता था परन्तु रहता था इंग्लैण्ड में। अपीली न्यायालय के लॉर्ड जस्टिस लोप्स ने एक्सप्रेसियों यूनियस सूत्र लागू करने की दलील अस्वीकार करते हुये कहा कि इस सूत्र को लागू करने का परिणाम अन्याय और उसी कानून के अन्य प्राव- ानों से विसंगति एवं बेतुकापन होगा। यह सूत्र निर्वचन में उत्पन्न समस्याओं का हमेशा निराकरण नहीं करता। इसका प्रयोग संयोगवश ही फलित होता है। हमेशा नहीं। यह लाभदायक अनुचर परन्तु खतरनाक स्वामी होता है।

डीन v वीजेनग्रन्ड 1955 [7]

इस वाद में लार्ड जस्टिस जेन्किंस के अनुसार, यह सूत्र एक सहायक से अधिक कुछ नहीं है और जहाँ सहायक है वहाँ कम वजनी भी है। यह अनिश्चित और असीमित है। प्रस्तुत वाद में इसका प्रयोग असंगति और अन्याय उत्पन्न करेगा। परभानी ट्रॉंसपोर्ट v आर०टी०ए० 1960[8] में भारतीय उच्चतम न्यायालय के अनुसार जहाँ कानून की भाषा सरल–सपाट–स्पष्ट हो वहाँ एक्सप्रेसियों यूनियस का प्रयोग नहीं होता। इन री, देहली लॉज एक्ट 1951[9] में इसे आम–सार्वभौम प्रवर्तनकारी सूत्र नहीं माना गया।

कर्नाटक राज्य v भारतसंघ 1977 [10]

इस वाद में मुख्य न्यायाधीश बेग ने कर्नाटक राज्य का एक्सप्रेसियो यूनियस सूत्र को लागू करने का तर्क अस्वीकार करते हुये कहा कि जो इस सूत्र को लागू करने–कराने की चेष्टा करते हैं वे अक्सर इसे लागू करने की शर्तों या परिस्थितियों को नजरअन्दाज करते हैं। संघ सूची की प्रविष्टि 97 केन्द्र को स्पष्ट और व्यापक रूप से जॉंच कमीशन अधिनियम के अन्तर्गत भ्रष्ट व्यक्तियों के विरूद्ध (चाहे वे मुख्यमंत्री हो या अन्य मंत्री) जॉंच आयोग बैठाने की शक्ति प्रदान करती है। इसमें वे सभी अवशिष्ट विषय आ जाते हैं जिनका उल्लेख राज्य सूची और समवर्ती सूची में नहीं किया गया हो।

Scanned with CamScanner

ऐसा प्रतीत होता है कि एक्सप्रेसियों यूनियस एक आकस्मिक मजदूर की भांति है जिसके बारे में यह निश्चित नहीं है कि वह दिया गया कार्य सुचारू रूप से कर पायेगा या नहीं या उसकी आवश्यकता पड़ेगी या नहीं। इसका प्रयोग तभी किया जाता है जब नियमित सेवक (निर्वचन के अन्य नियम) उपलब्ध न हो। इससे सेवा लेते समय हमेशा सतर्क रहना चाहिये। ऐसा न हो कि निर्दिष्ट कार्य को करने की अपेक्षा स्वामी को हानि ही पहुँचा दे। उस पर अधिक विश्वास करना खतरे से खाली नहीं होता।

Scanned with CamScanner

(5) तत्कालीन व्याख्या और प्रचलन सर्वोत्तम है। यूजेज एण्ड कन्टेम्पोरेनिआ एक्सपोजिशियो एस्ट फोर्टिसिमा इन लेजे (Usage & contemporanea expositio est fortissima in lege)

तात्पर्य

लार्ड कोक द्वारा प्रतिपादित कन्टेम्पोरेनिआ एक्सपोजिशियो लैटिन सूत्र का तात्पर्य है कि किसी पुराने कानून की वह व्याख्या जो उसके निर्माणकाल या उसके आसपास के समय में की गई है, उत्तम होती है अतः उसे प्रभावी–सम्मानीय मानना चाहिये। चाहे वह वर्तमान काल में प्रचलित लोकप्रिय अर्थ से भिन्न ही क्यों न हो। इसके पीछे दो कारण हैं। एक तो यह स्वाभाविक है कि पुराने कानून के समकालीन न्यायालय एवं विधानमंडल उस कानून की पृष्ठभूमि और उसे पारित करने के कारणों से अच्छी तरह परिचित होते हैं। दूसरे,, तत्कालीन निर्वचन का अबाध प्रचलन और विधानमंडल की उसके प्रति मौन स्वीकृति उसे और अधिक शक्ति प्रदान करती है। (मैक्सवेल, क्रेज, अर्ल ऑफ वाटरफोर्डस क्लेम 1832, मोर्गन v क्राशे 1871)।[1]

तत्कालीन व्याख्या सूत्र को लागू करते समय कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिये।

1. सामान्यतः इसका प्रयोग पुराने कानूनों के निर्वचन में किया जाता है। लार्ड वाट्सन के अनुसार 1858 या उसके बाद के ब्रिटिश कानूनों के निर्वचन में कन्टेम्पोरेनिआ एक्सपोजिशियो सूत्र का कोई महत्व नहीं है। आधुनिक कानूनों का निर्वचन उन्हीं के शब्दों के अनुसार किया जाना चाहिये। (क्लाइड नेविगेशन ट्रस्टीज v लेयर्ड 1883, केम्पबेल कॉलेज, वेल्फास्ट v कमिश्नर ऑफ वेल्युअेशन फॉर नार्दन आयरलैण्ड 1964)।[2]
2. इस सूत्र का प्रयोग सामान्यतः धार्मिक, सम्पत्ति कर, संविदा, व्यापार और प्रशासकीय कानूनों और प्रचलनों के निर्वचन में किया जाता है।
3. यह सूत्र तभी अनुकरणीय माना जाता है जब इसका प्रयोग निरन्तर अनेक वादों या प्रचलन में किया गया हो। यदि प्रयोग निरन्तर नहीं हुआ है यानी बीच–बीच में इसकी औचित्यता पर प्रश्न चिन्ह लगे हों या यह एकाध निर्णय में ही प्रयोग किया गया हो या यह न्यायिक निर्णय न होकर केवल न्यायिक परामर्श हो तो इस सूत्र के आधार पर निर्वचन नहीं करना चाहिये।
4. यदि तनिक भी कानूनी आधार नहीं है या यह सूत्र बदली परिस्थितियों में असुविधाजनक है तो इसका प्रयोग बंद किया जा सकता है जैसा कि हाउस ऑफ लार्डस ने बिरमिंघम सिटि कारपोरेशन v वेस्ट मिडलेण्ड बापटिस्ट[3] 1969 में किया था। इस वाद में लार्ड सभा ने पूरी एक शताब्दी से चले आ रहे प्रचलन कि प्रतिकर का आकलन सम्पत्ति छोड़ देने के नोटिस की तारीख से किया जायेगा को अमान्य घोषित कर दिया और कहा कि प्रतिकर सम्पत्ति मूल्य के आकलन

Scanned with CamScanner

के दिन से या कब्जा लेने के दिन से दिया जाना चाहिये।

5. यह सूत्र पुराने कानूनों में विरोधाभास दूर करने में केवल सहायक होता है। यह किसी कानून का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष निरसन नहीं करता। (म्युनिसिपल कारपोरेशन, पूना सिटी v भारत फोर्ज क०लि० 1996)[4]।

6. भारत जैसे देश में इस सूत्र का प्रयोग संविधान, संविधानवाद, मूलअधिकार और राष्ट्र की एकता, अखंडता वा सम्प्रभुता के प्रतिकूल नही करना चाहिये।

7. जहाँ तक कार्यपालिकायी या विभागीय एकरूप सतत् प्रचलनों या निर्वचनों का प्रश्न है वहाँ उनका जारी रहना कई बातों पर निर्भर करता है जैसे कि क्या उन्हें विधायी या न्यायिक मान्यता प्राप्त हो गयी है? प्रचलन कितना पुराना है? उससे विचलन किसी सम्पत्ति या अधिकार को कितना प्रभावित करेगा या उससे कितना अन्याय होगा आदि।[5]

तत्कालीन व्याख्या सम्बन्धित वाद–उदाहरण

मार्टिन v मैकोनोचि 1868 [6]

यह अभिनिर्धारित करते हुये कि 'आरनामेन्टस रूब्रिक प्रचलन' के अन्तर्गत यह अवैध है कि प्रकाश हेतु जलती हुई मोमबत्तियाँ आवश्यक नहीं है, लार्ड केरन्स ने कहा कि "न्यायाधीशगण पिछले 300 वर्षों के प्रचलन का सन्दर्भ नही ले रहे हैं, लेकिन उनका मत है कि धार्मिक क्रान्ति (16वीं शताब्दी) के उपरान्त मोमबत्तियों का आम प्रयोग बन्द हो जाना पूर्व निर्धारित एवं प्रचलित प्रचलन के प्रतिकूल है, यह सम्बन्धित विषय पर कानून की एक अत्यधिक सशक्त, सतत और तत्कालीन व्याख्या है।"

ऐलेसन v. मार्श 1690 और क्ले v सजरेव 1700 [7]

1391 के एक अधिनियम में लिखित रूप में स्पष्टतः उल्लिखित था कि काउन्टीज संस्थाओं के अन्दर की गई संविदाओं पर एडमिरल्टी (कोर्ट) की कोई अधिकारिता नहीं होनी चाहिये; फिर भी, इंग्लैण्ड में मल्लाहों द्वारा किये गये अनुबन्ध सम्बन्धित वाद प्राचीन प्रचलन के आधार पर उस कोर्ट में संस्थित किये गये क्योंकि वहाँ कॉमन लॉ न्यायालयों की अपेक्षा अच्छा उपचार मिलता था। मुख्य न्यायाधीश होल्टर के अनुसार, यह प्रत्यक्ष कानून के विरूद्ध परन्तु अब Communis error tacit jus अर्थात सामान्य त्रुटि है जो कानून बन गई है।

एन० सुरेश नाथन v भारतसंघ 1992 [8]

एक 'सेवा नियम' के अनुसार, यदि सिविल इन्जीनियरिंग डिग्री धारक अनुभाग अधिकारियों ने अपने ग्रेड में तीन वर्ष की सेवा पूर्ण करली है तो वे पदोन्नति का दावा कर सकते थे। निर्वचन का प्रश्न यह था कि तीन वर्ष के समय की गणना कब से की जायेगी! एक लम्बे काल से चले आ रहे प्रचलन के अनुसार यह समय गणना तब से की जायेगी जब अधिकरी ने

Scanned with CamScanner

उक्त डिग्री–उपाधि प्राप्त की है। न्यायालय ने इसे स्वीकारते हुये कहा कि यदि पिछले प्रचलन के आधार पर निर्वचन सम्भव है तो उसे छेड़ना अब अनुपयुक्त होगा।

नागालैण्ड राज्य v रतन सिंह 1967[9]

अनुसूचित जिला अधिनियम 1874 स्थानीय सरकार को सिविल और दंड अधिकारी नियुक्त करने और उनके लिये प्रक्रिया नियमित करने के लिये अधिकृत करता था। उच्चतम न्यायालय ने 1872, 1874, 1906 और 1937 के व्यापक प्रक्रियायी नियमों का संदर्भ लेते हुये कहा कि केवल प्रशासनीय नियम ही नहीं, अपितु न्यायिक प्रक्रियायी नियम भी नियमित करने का अधिकार है।

नेशनल और ग्रिन्डलेज बैंक v म्युनिसिपल कॉरपोरेशन, ग्रेटर बम्बई 1969[10]

बम्बई म्युनिसिपल कॉरपोरेशन अधिनियम 1888 की धारा 146(2) के अनुसार, यदि भूमि–भवन को पट्टे पर दे दिया गया है तो पट्टाधारक से सम्पत्ति कर वसूला जायेगा। निगम के एक लम्बे प्रचलन के आधार पर उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्णित किया कि जहाँ भूमि और उस पर निर्मित भवन को एक वर्ष से कम समय के पट्टे पर दिया गया है, वहाँ भूमि–भवन दोनों को एक ही ईकाई मानकर सम्पत्तिकर भूस्वामी से वसूल किया जावेगा चाहे भूमि पर भवन का निर्माण पट्टाग्राही ने ही करवाया हो और वही भवन का मालिक हो।

नागा मानवीय अधिकार आन्दोलन v भारतसंघ 1998[11]

इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने केन्द्र सरकार के पुराने निर्देशों (करो या मतकरो) के सन्दर्भ में आर्म्ड फोर्सेज (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम 1958 की धारा 4–5 का निर्वचन किया जिससे अशान्त क्षेत्र में सैन्य शक्ति का दुरूपयोग रोका जा सके और कहा कि केन्द्रीय निर्देश बाध्यकारी हैं।

परन्तु उच्चतम न्यायालय ने अनेक वादों में जैसे कि ज्येष्ठ विद्युत निरीक्षक v लक्ष्मीनारायण 1962, राजाराम v बिहार राज्य 1964, मै0जे0के0 कॉटन लि0 v भारतसंघ 1988 आदि[12] में तत्कालीन व्याख्या सूत्र के आधार पर सम्बन्धित अधिनियमों क्रमशः भारतीय विद्युत अधिनियम 1910, भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क और नमक अधिनियम 1944 और उपक्रम का अर्जन और अन्तरण अधिनियम 1980 का निर्वचन करने से मना कर दिया क्योंकि ये अधिनियम नये हैं और विधानमंडल उनमें आधुनिक परिवर्तनों को ध्यान में रखकर अपना विधायी आशय प्रकट करता है।

Scanned with CamScanner

(7) शब्दों का क्रमवार–उपयुक्त वितरण का नियम रेडेन्डो सिंगुला सिंगुलिस (Reddendo Singula Singulis)

तात्पर्य

रेडेन्डो सिंगुला सिंगुलिस नियम का अर्थ है कि–कानून के किसी वाक्य के आरम्भ में उल्लिखित सामान्य शब्दों को उसी वाक्य में आगे वर्णित विशिष्ट वस्तु–बातों में क्रमवार–उपयुक्त रूप से वितरित करते हुये पढ़ना चाहिये। जैसे–'यदि कोई खींचेगा या भरेगा कोई तलवार या बन्दूकों इस वाक्य में सामान्य शब्द 'खींचेगा' केवल विशेष वस्तु 'तलवार' के लिये और 'भरेगा' बन्दूक के लिये वितरित करके पढ़ना चाहिये। (वारटन: लॉ लेक्सिकॉन)[1]

देपा पी० सारथी के अनुसार,[2] यह नियम अंग्रेजी के respectively क्रमशः शब्द का अर्थ बोध कराता है। ओसबोर्न कंसाइज शब्दकोष[3] में भी इस नियम का उदाहरण है कि–'मैं 'अ' को वसीयत से देने की योजना और वसीयत करता हूं अपनी समस्त वास्तविक और व्यक्तिगत सम्पत्ति–I devise and bequeath all my real and personal property to A. रेडेन्डो नियम के अनुसार, यहाँ वसीयत द्वारा देने की योजना शब्दावली को केवल वास्तविक सम्पत्ति के सन्दर्भ में, तो वसीयत करता हूँ को व्यक्तिगत सम्पत्ति के सन्दर्भ में पढ़ना चाहिये। मेक्नील v. क्रोमलीन[4] 1858 नामक आयरिश वाद में भी इसे उक्त रूप में ही अभिव्यक्ति किया है।

कानूनों में सन्देह–कठिनाईयों के निवारण हेतु या विधायी आशय को स्पष्ट समझने के लिये रेडेन्डो सिंगुला सिंगुलिस एक सुपरिचित, निर्विवाद और महत्वपूर्ण नियम है। परन्तु जहाँ कानून–प्रावधान स्पष्ट–सपाट हो, वहीं इस नियम का प्रयोग नहीं करना है।[5]

उदाहरण–वाद

बिशप v. डीकिन 1936[6]

इस वाद में न्यायाधीश क्लॉजन ने कहा कि लोकल गवर्नमेन्ट एक्ट 1935 की धारा 59(1) के निर्वचन में आयी सभी कठिनाइयाँ रेडेन्डो सिंगुला सिंगुलिस नियम के प्रयोग से दूर की जा सकती हैं। इस धारा के अनुसार, 'एक व्यक्ति किसी स्थानीय संस्था का सदस्य निर्वाचित होने के लिये या सदस्य बने रहने के लिये निर्योग्य होगा यदि निर्वाचन दिन के पूर्व पाँच वर्ष के अन्दर या उसके निर्वाचन से किसी अपराध के लिये तीन माह के कारावास से दंडित हो गया हो। एक न्यायाधीश के अनुसार, यह धारा दो मामलों में दो निर्योग्यताओं का उल्लेख करती है।

निर्वाचन के लिये दूसरी निर्वाचन उपरान्त सदस्य बने रहने के लिये। पाँच वर्ष के भीतर दोष सिद्धि की प्रथम निर्योग्यता पहले मामले यानी निर्वाचन के लिये और तीन माह का कारावास की द्वितीय निर्योग्यता दूसरे मामले में यानी निर्वाचन उपरान्त सदस्य बने रहने के लिये। ऐसा निर्वचन करते हुये उक्त वाद में निर्णय दिया गया कि निर्वाचन के पूर्व की निर्योग्यता सदस्य बने रहने के लिये लागू नहीं होगी यदि समय–सीमा के अन्दर निर्वाचन को निर्वाचन याचिका द्वारा चुनौती नहीं दी गयी है। प्रस्तुत वाद में, यथानुसार, सदस्य ने अपना पद रिक्त नहीं किया।

कोटेश्वर वी0के0 v. के0 रंगप्पा वालिगा एण्ड कं0 1964 [7]

इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 304 के परन्तुक में शंका निवारण हेतु रेडेन्डो सिंगुला सिंगुलिस नियम का प्रयोग किया था। इस परन्तुक के अनुसार, राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना कोई भी विधेयक या संशोधन किसी राज्य विधानमंडल में पुरःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जायेगा। न्यायालय के अनुसार यहाँ शब्द विधेयक" पुरःस्थापित के साथ तो शब्द 'संशोधन' प्रस्तावित के साथ पढा जायेगा।

Scanned with CamScanner

(8) समविषयी कानून
स्टेट्यूटस इन पारी मटीरिया
(Statutes in Pari Materia)

तात्पर्य

सामान्यतः एक अधिनियम के किसी प्रावधान का निर्वचन उसी अधिनियम के उद्देश्य, संदर्भ, आन्तरिक और बाह्य सहयोगियों की सहायता से किया जाता है। परन्तु अपवाद स्वरूप, प्रमुखः गम्भीर संदिग्धता की स्थिति में निर्वचन पारीमटीरिया–अर्थात समविषयी अन्य अधिनियम की सहायता से भी किया जा सकता है।

आर० v. लोक्सडेल 1758 में लार्ड मेन्सफील्ड के अनुसार, पारी मटीरिया से तात्पर्य एक ही विषय,–(समविषय) (मात्र समान नहीं) वस्तु, श्रेणी शब्द–शब्दावली या व्यक्ति से सम्बन्धित दो या अधिक भिन्न–भिन्न अधिनियम या उनके प्रावधान चाहे वे भिन्न–भिन्न काल में पारित हो या निरसित हों या एक दूसरे का संदर्भ न देते हों या एक दूसरे से स्वतंत्र हों। उनका निर्वचन एक साथ इस प्रकार किया जायेगा मानों वे एक ही प्रणाली–व्यवस्था के अंग हों।[1] धार्मिक–चर्च सम्पत्ति का पट्टा, दिवालिया और निर्धनों से सम्बन्धित सभी कानूनों को एक ही व्यवस्था के अंग मानकर उन्हें पारी नटीरिया कहा जा सकता है। स्टाम्प टिकट से सम्बन्धित सभी अधिनियम पारी मटीरिया कहे गये है। (क्रॉसले v आर्कराइट 1788 ।[2] जहाँ दो या अधिक अधिनियम समविषयी हैं वहाँ पूर्व अधिनियम पर दिये गये न्यायिक निर्णय पश्चातवर्दी अधिनियम के निर्वचन में सामान्यतः सुसंगत और बाध्यकारी होते हैं। (मिचेल v सिम्सन 1890[3], स्मिथ v बेकर 1891 ।[4]

समविषयी नये और पुराने अधिनियमों में यदि भाषा–शब्द–प्रावधान एक से है तो यह उपधारणा होगी कि उनका अर्थ भी एक सा है। (लेनॅन v गिब्सन & होब्ज लि० 1919)[5]। यदि नये अधिनियम में पुराने अधिनियम के पर्याय–अंलकारिक शब्दों को ही हटाया गया है तब भी दोनों अधिनियमों के सम्बन्धित प्रवाधानों का एक सा अर्थ होगा। इसीप्रकार, जहाँ नये अधिनियम में शब्द परिवर्तित कर दिये गये हों परन्तु उनका अर्थ पुराने कानून जैसा हों तो भी वे समानार्थक माने जायेगे। तात्पर्य यह है कि जब तक नये अधिनियम में शब्दों के साथ–साथ विधायी आशय भी भिन्न न हो तब तक समविषयी कानूनों का अर्थ एक सा ही माना जा सकता है। उदाहरण के लिये अटॉर्नी जनरल v ब्रॉडलॉफ 1885 में पार्लियामेन्ट्री ओथ एक्ट 1866 कि शब्दावली 'दी ... दी ओथ शैल बी टेकन' को एक सी भावार्थ वाली शब्दावली मानी गयी।[6]

Scanned with CamScanner

पारी मटीरिया के नियम का आधार यह उपधारणा है कि–जब विधान मंडल कोई अधिनियम या प्रावधान रचता है तब, उसी विषय से सम्बन्धित पूर्व अधिनियम उसके ध्यान में रहता है।

परन्तु लार्ड डेनिंग के अनुसार' जहाँ विधानमंडल स्पष्ट रूप से निर्वचन ग्रस्त प्रावधान या उसकी शब्दावली को सीमित या व्यापक अर्थ प्रदान करता है वहाँ पारी मटीरिया नियम लागू करने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। अर्थात वहाँ पूर्व अधिनियमों के पन्नों की धूल झाड़ना व्यर्थ है।

उदाहरण

1. पेन–टेक्सास कार्पोरेशन v. मुराट ऐन्सटाल्ट (नं02) 1964[8] वाद में "फॉरिन ट्रिब्युनल ऐविडेन्स एक्ट 1856 धारा (1) और ऐविडेन्स बाइ कमिशन एक्ट 1843 धारा (5)" को पारी मटीरिया माना गया क्योंकि दोनों ही साक्ष्य ग्राह्यता पर आधारित हैं। एक विदेशी न्यायालय के लिये तो दूसरा ब्रिटिश न्यायालय के लिये प्रावधानित हैं।

2. री, मेट्रोपोलिटन फिल्म स्टूडियो लि0 एप्लीकेशन 1962[9]

वाद में लीजहोल्ड प्रॉपर्टी रिपेयर्स एक्ट 1938 और लॉ ऑफ प्रॉपर्टी एक्ट 1925 को पारी मटीरिया कहा गया क्योंकि दोनों ही एक विषय–मरम्मत सम्बन्धित नियम उलंघन पर एक से हैं।

3. बोल्टन कारपोरेशन v. ओवेन 1962[10]

वाद में दी टाऊन एण्ड कन्ट्री प्लानिंग एक्ट 1959 और 1947 को एक साथ निर्वचित किया गया।

4. मद्रासराज्य v. वैद्यनाथ अय्यर 1958[11]

इस वाद में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1947 धारा 4 में प्रयुक्त शब्दावली Shallbe presumed को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की Shall presume के समतुल्य माना गया।

5. सरसिल्क लि0 v. टेक्सटाइल कमेटी 1989[12]

टेक्सटाईल कारखाना के सन्दर्भ में इन्डस्ट्रीज अधिनियम 1951 और टेक्सटाइल्स कमेटी अधिनियम 1963 को पारीमटीरिया कहा गया।

6. कॉमन कॉज ए रजिस्टर्ड सोसायटी v. भारतसंघ 1996[13]

इस वाद में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम धारा 77(1) के दृष्टांत (1) में प्रयुक्त शब्दावली–एक राजनैतिक दल द्वारा अपने प्रत्याशी के निर्वाचन पर व्यय–खर्च को स्वयं प्रत्याशी द्वारा व्यय–खर्च नहीं माना जायेगा, को आयकर अधिनियम 1961 की 13A अर्थ 139 (4B) के साथ पढ़ा गया जिसमें लिखा है कि यद्यपि राजनैतिक दलों को भवन वा अन्य क्षेत्रों से प्राप्त धन पर आयकर

Scanned with CamScanner

की छूट है परन्तु वे ऐसी आय का लेखा जोखा रखने में आय रिटर्न भरेंगे। अन्यथा यह नही माना जायेगा कि उन्होंने ऐसे धन को अपने प्रत्याशियों के निर्वाचन पर व्यय किया है। या उक्त प्रावधान अनजान वा कालेधन के व्यय पर छूट नहीं देता।

7. भारतीय संविधान के अनेक प्रावधान वा शब्दावलियाँ 1935 के अधिनियम से अपनाये गये हैं। अतः दोनों को पारी मटीरिया कहा जा सकता है। इसी प्रकार–

8. नयी दंड प्रक्रिया संहिता का निर्वचन पुरानी दंड प्रक्रिया संहिता के सहयोग से किया जा सकता है। अर्थात्, समेकनकारी और संहिताकारी कानूनों का निर्वचन उसी विषय पर निरसित कानूनों के सन्दर्भ में किया जा सकता है।

9. दो अधिनियमों या उनके प्रावधानों में एक से–सम शब्द–शब्दावली का अर्थ भी सामान्यतः एकसा ही निर्वचित किया जाता है। जैसे कि 1948 और 49 के कृषि अधिनियमों में–कृषिभूमि शब्द, 1927 और 54 के लैण्डलॉर्ड एवं सीमेन्ट अधिनियमों में परिसर शब्द।

परन्तु कुछ शब्दों का अर्थ विभिन्न अधिनियमों या प्रावधानों में समय–काल के अनुसार बदलता रहता है अतः उन्हें केवल नये–वर्तमान विधायन के अनुरूप ही निर्वचित किया जाना चाहिये। जैसे कि Market Value बाजारी मूल्य, Possession कब्जा और कर अधिनियमों में Income, expenditure आय–व्यय जैसे अनेकानेक शब्द।

Scanned with CamScanner

10. दांडिक और कर कानून
(Penal and Taxing statutes)

I. दांडिक कानूनों का निर्वचन
(Interpretation of penal statutes)

A- *दांडिक विधियों से तात्पर्य*

दांडिक विधियों से तात्पर्य अपराध, दंड निर्धारण और क्रियान्वयन करने वाली विधियों से है। जैसे कि भारत में, भारतीय दंड संहिता, दंड प्रक्रिया संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम के साथ–साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, खाद्य पदार्थ अपमिश्रण निवारण अधिनियम, आवश्यक वस्तु अधिनियम मुद्रा विनियमन अधिनियम, सागर सीमा शुल्क अधिनियम, दहेज प्रथा प्रतिषेध अधिनियम, विभिन्न प्रकार के पुलिस अधिनियम–रूल्स आदि, निवारक निरोध विधियाँ, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 20 और 22 आदि।

B- *दांडिक विधियों के कठोर निर्वचन के कारण और अवस्थायें*

कर विधियों की भांति बल्कि उनसे भी कहीं अधिक कठोर निर्वचन दांडिक विधियों का

Scanned with CamScanner

किया जाता है। कारण, उदार निर्वचन से व्यक्तियों को अनावश्यक ही या लापरवाही में शारीरिक मानसिक, मनोवैज्ञानिक या आर्थिक दंड दिये जाने का भय रहता है। दूसरे, आपराधिक वादों में एक पक्ष–अभियोजन पक्ष राज्य होता है जो राजसत्ता व शासन तंत्र का प्राय व्यक्तियों के विरूद्ध दुरूपयोग करता रहता है।

मैक्सवेल के अनुसार, दांडिक विधियों का कठोर निर्वचन उनकी चार अवस्थाओं में किया जा सकता है।

1. अपराध सृजन स्पष्ट भाषा में हो,
2. अपराध के तत्व सुनिश्चित हों,
3. दंडित किये जाने के पूर्व विधिक शर्तों का अक्षरसः से पालन हो और
4. आपराधिक प्रक्रिया एवं अधिकारिता सम्बन्धित तकनीकी धाराओं का कठोर पालन हो।[96]

C- दांडिक विधियों के कठोर निर्वचन के नियम

1. यह उपधारणा है कि समस्त विधियाँ जिनमें आपराधिक विधियाँ भी सम्मिलित हैं, का निर्वचन संवैधानिक प्रावधानों के प्रतिकूल नही करना चाहिये। केदार नाथ v. पं0 बंगाल 1953[97] में संविधान के अनुच्छेद 20(1) का संदर्भ देते हुये यह निर्णित किया गया कि प्रत्येक व्यक्ति को भूतार्थ विधियों से संरक्षण प्राप्त है। अर्थात्, भूतकाल में किये गये सुकार्य को वर्तमान की आपराधिक विधि द्वारा अपराध मानकर दंडित करना या दंड की मात्रा की अभिवृद्धि करना असभ्यता है। इसी प्रकार, संविधान का अनुच्छेद 20(2)(3) दोहरे दंड और आत्म अभिशंसन से भी व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करता है। अनुच्छेद 21के निर्वचन में भी उच्चतम न्यायालय ने कैदियों, अभियुक्तों और निरूद्ध व्यक्तियों की अनेक वैयक्तिक स्वतन्त्रताओं को संरक्षण प्रदान किया है। अतः दांडिक विधियों के निर्वचन के समय संवैधानिक प्रावधानों का ध्यान रखना नितान्त–प्राथमिक आवश्यकता है।

2. जबतक किसी व्यक्ति को आपराधिक विधि के स्पष्ट शब्दों, तत्वों और प्रक्रिया के अन्तर्गत दोष सिद्ध न कर दिया जाये तब तक उसे निर्दोष मानना चाहिए और दण्डित नहीं किया जाना चाहिए। उ0प्र0 v. ललई सिंह यादव सिंह 1976[98] के वाद में प्रत्यर्थी द्वारा प्रकाशित रामायण को अपमानकारी, अपवित्रकारी, उपद्रवी व आपत्तिजनक मानते हुये सी0आर0पी0सी0 की धारा 99A के अन्तर्गत जब्ती को मूलअधिकार के प्रतिकूल माना गया और कहा गया कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में असफल रहा है कि रामायण का प्रकाशन कैसे–किस प्रकार अपमानकारी है। दांडिक प्रावधानों का कठोर अर्थान्वयन किया जाता है। पंजाब v. रामसिंह 1992[99] में न्यायालय ने कहा कि यद्यपि अवचार शब्द की कोई निश्चित परिभाषा नहीं है, यदि कोई सिपाही नियोजन दौरान शराब पीकर घूमता है तो वह अवचार है और उसके आधार पर

Scanned with CamScanner

उसकी पदच्युति वैध है।

3. दांडिक विधि या अभियोजन पक्ष द्वारा दोष सिद्धि में तनिक भी संन्देह हो तो सन्देह का लाभ (Benefit of Doubt) अभियुक्त को देकर उसे विमुक्त कर दिया जाता है। सज्जन सिंह v. पंजाब राज्य 1964 और इन्द्रसेन v. पंजाब राज्य 1973[100] के वादों में यह निर्णित किया गया कि अभियुक्त से अफीम बरामदी के साथ–साथ यह भी सिद्ध किया जाना चाहिये कि अभियुक्त को स्वयं के पास अफीम होने का ज्ञान भी था।

4. रतन लाल v. पंजाब राज्य 1965[101] के अनुसार, यदि किसी भूतलक्षी आपराधिक विधि से अभियुक्त को लाभ मिलता हो यानी उसकी सजा कम होती हो तो उसे ऐसा लाभ अभियोजन आरम्भ होने के उपरांत भी निम्न न्यायालय या अपीलीय न्यायालय को देना चाहिये। इस वाद में 21 वर्षीय अभियुक्त की सजा परिवीक्षा अधिनियम 1958 के अन्तर्गत उच्चतम न्यायालय ने कम कर दी थी।

शेख अब्दुल अजीज v. कर्नाटक राज्य 1977 [102] में उच्चतम न्यायालय ने IPC की धारा 303 का निर्वचन करते हुये कहा कि इस धारा के अन्तर्गत अनिवार्यतः मृत्युदंड केवल उस परिस्थिति में लागू होगा जब हत्या का अपराधी आजीवन कारावास की सजा भुगत रहा हो। यदि हत्या अपराधी की आजीवन कारावास की अवधि कम करके उसे मुक्त कर दिया हो और ... उक्त धारा के अन्तर्गत अनिवार्यतः मृत्युदंड नहीं

करने वाले को दंडित किया जायेगा और दोनों प्रकार के कागजों पर कर देना होगा।

आर0 v. आयरलैण्ड 1997[106] में यह अभिनिर्णित किया गया कि हमला और शारीरिक क्षति Assault & Bodily harm शब्दावली में दूरभाष कालों द्वारा दी गई मनोवैज्ञानिक क्षति–उपहति भी सम्मिलित है।

आर0 v. हॉल 1964[107] में British sexual offenders' Act 1956 की धारा 13 में अभिलिखित था कि यदि कोई व्यक्ति 'किसी महिला के साथ गम्भीर अभद्रता करता है' तो वह अपराध होगा। न्यायालय के अनुसार यहाँ शब्द "साथ"with का तात्पर्य महिला के विरूद्ध है। न कि उसकी सहमति से।

7. सामान्यतः अपराध कारित करने में अपराधी की *आपराधिक मनःस्थिति*–Mens Rea होती है। परन्तु इस उपधारणा के कई अपवाद भी हैं। एक तो लोप omission द्वारा भी अपराध सम्भव है। दूसरे, रस्कोपाउन्ड और फ्रीडमेन जैसे विधि–शास्त्रियों का कहना है कि आधुनिक काल में जनस्वास्थ्य, जनसुरक्षा और नैतिकता के संरक्षण हेतु जनता के कठोर दायित्व वाली स्पष्ट आपराधिक विधियों की रचना वैध है। इनके अन्तर्गत बिना आपराधिक भावना के भी अपराध घटित हो सकता है। इन्हें Administrative punitive law या Public welfare crimes कहा जाता है। उदाहरण के लिये– Bansh lochan Prasad

रणजीत उड़ेसी v.. महाराष्ट्र राज्य 1965[108] में यह अभिनिर्णित किया गया कि जहाँ दाण्डिक विधि IPC धारा 292 स्पष्ट है कि अश्लील साहित्य (लेडी चटर्जीज लवर नामक पुस्तक) का दुकान में रखना मात्र ही अपराध है–चाहे पुस्तक विक्रेता को उसकी अश्लीलता का ज्ञान–अनुमान हो या नहीं, वहाँ पुस्तक विक्रेता दण्डनीय है। इसी प्रकार, महाराष्ट्र v.. हंस जार्ज 1965[109] में अपराधी को बिना आपराधिक भावना के केवल स्वेच्छा से विदेश से सोना लाने पर विदेशी मुद्रा अधिनियम 1947 की धारा 8(1) और 23(क) के अन्तर्गत दंडित कर दिया गया था।

सरजू प्रसाद v. उ0 प्र0 राज्य 1961[110] में अपीलार्थी एक दुकान पर नौकर था। उसे ज्ञान–अनुमान भी नहीं था कि दुकान मालिक उससे मिलावटी खाद्य–पदार्थ विक्रय करवाता है। फिर भी उसे खाद्य–अपमिश्रण निवारण अधिनियम की धारा 16 और 19 के अन्तर्गत दंडित कर दिया गया। क्योंकि धारा 19 स्पष्ट प्रावधान करती है कि मिलावट की अज्ञानता वैध प्रतिरक्षा नहीं होगी।

D- दांडिक विधियों और कर विधियों के निर्वचन में अन्तर

दोनों प्रकार की विधियों का कठोर शाब्दिक निर्वचन किया जाता है। दोनों में, सन्देह लाभ और छूट की स्थिति में निर्वचन व्यक्ति–अपराधी–करदाता के पक्ष में किया जाता है। दोनों प्रकार शब्दजाल या छलकपट करके न तो अपराध से और न ही कर से बचा सकता है। दोनों प्रकार

Scanned with CamScanner

की विधियां संविधान के प्रतिकूल नहीं हो सकती।

परन्तु कर विधि भूतलक्षी हो सकती है और दोहरा कर भी आरोपित किया जा सकता है। आपराधिक विधि सामान्यतः न तो भूतलक्षी होती है और न ही दोहरा दंड प्रदान करती है। अपराध कारित करने में सामान्यतः आपराधिक मनः स्थिति एक आवश्यक तत्त्व माना जाता है जबकि कर विधि में आपराधिक भाव सुसंगत नहीं माना जाता है। अनेकानेक आपराधिक विधियाँ नैतिक मूल्यों के आधार पर उनके संरक्षण एवं संवर्धन हेतु निर्मित की गई है जबकि कर विधियों का नैतिकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता। कर देना कोई नैतिक कर्तव्य नहीं होता।

II. कर विधियों का निर्वचन
(Interpretation of taxing or fiscal statutes)

A- *कर विधियों से तात्पर्य ओर उनका उद्देश्य*

कर विधियों से सामान्य तात्पर्य ऐसी राज्यविधियों से है जो व्यक्तियों, निकायों आदि पर आर्थिक भार के रूप में कर-शुल्क आदि का आरोपण, निर्धारण वा वसूली करती हो। फिर, चाहे वे आयकर, धनकर, दानकर, निकायकर, व्यापार कर, विक्रय कर, कोर्टफीस, उत्पाद शुल्क, सीमा शुल्क आदि किसी भी रूप में हो। ऐसी विधियाँ राज्य को विधि द्वारा कर-शुल्क लगाने वा वसूल करने का वित्तिय अधिकार प्रदान करती हैं। तथा जनता का कर्तव्य निर्धारित करती हैं कि वह राज्य को करों का भुगतान करे। करों से प्राप्त धन को राज्य लोक कल्याण में व्यय करता है। भूतकाल में जॉन लॉक जैसे दार्शनिकों के अनुसार, यदि राज्य करों से प्राप्त धन का दुरूपयोग करता है तो जनता को चाहिये कि उसे करों की अदायगी ही न करे। इससे यह अर्थ निकलता है कि कर आरोपण राज्य का प्राकृतिक या नैतिक अधिकार नहीं है। और न ही जनता का नैतिक दायित्व ही है कि वह करों की अदायगी करे। दूसरे शब्दों में मूलतः करारोपण और उसकी अदायगी राज्य और जनता के मध्य एक-दूसरे से लेने-देने की एक अप्रत्यक्ष संविदा है।

भारत में, संविधान के अनुच्छेद 265 के अनुसार, बिना विधिक प्राधिकार के (संसद या राज्य विधान मण्डलीय विधि के) कोई कर न तो आरोपित किया जायेगा और न ही संग्रहीत किया जायेगा। विधानमंडल कानून में बिना स्पष्ट शब्द, आशय, भाषा और घोषणा के कर आरोपित नहीं कर सकता (ओरियन्टल बैंक v. राइट 1880 और डॉक कं० लि० हल v. ब्राउने 1831)।[111]

B- कर विधियों का कठोर निर्वचन

अटार्नी जनरल v. कार्ल्टन बैंक 1899[112]-में मुख्य न्यायाधीश लार्ड रसल के अनुसार, कर विधियों सहित समस्त विधियों के निर्वचन में यह एक समान सिद्धान्त लागू होता है कि विधि में *सपाट-स्पष्ट रूप से व्यक्त विधायी आशय को सादर-प्रभावी रूप से लागू किया*

Scanned with CamScanner

जाना चाहिये।

परन्तु सन्देह की अवस्था में कर विधियों के निर्वचन में एक ही सिक्के के दो पहलु की भांति कठोर निर्वचन का सिद्धान्त अपनाया जाता है जिसे निम्नांकित रूप में व्यक्त किया जा सकता है। डेवर v. आई.आर.सी. 1935[113] में लार्ड हनवर्थ एम.आर. ने विनिश्चित किया था कि–एक कर विधि के स्पष्ट शब्दों में जनता या तो कर देने को बाध्य है या नहीं है–यदि वह शब्दों के दायरे में नहीं आती। Either in clear terms of a taxing statute, the subject is liable or if he is not within the words, he is not liable."

चार्ल्स जेम्स पारटिंग्टन v. ए0जी0 1869 और प्राइस v. मनमाउथशायर केनाल & रेलवे कं0 1879[114] वादों में लार्ड केरन्स ने और अधिक खुलासा करते हुए अभिनिर्णित किया कि कराधान विधियों की अक्षरसः कठोर शाब्दिक व्याख्या करनी चाहिये। "चाहे न्यायिक विवेक को कितनी ही असुविधा, बेतुकापन महसूस हो, यदि कोई कराधान विधियों के शब्दों की सीमा के अन्तर्गत आता है तो उसे कर देना ही पडेगा। दूसरी ओर, यदि राजा–राज्य किसी को स्पष्टतः कर विधि शब्दों में नहीं रखता तो व्यक्ति कर न देने को स्वतन्त्र है। परिणाम कुछ भी हो, करदाता करविधियों की शाब्दिक व्याख्या करने–कराने का अधिकार रखता है।"

दी वीजियर v. आई0आर0सी0 1964 और वेस्टवार्ड टेलीविजन v. हार्ट 1968[115] के अनुसार, कर विधि की भाषा की खींचतान न तो राज्य के पक्ष में और न ही कर दाता के पक्ष में की जायेगी।

हॉग v. पेरीचिअल बोर्ड ऑफ ऑच्टरमच्टि 1880[116] में लार्ड यंग ने एक महत्वपूर्ण बात कही थी। जिसे आधुनिक न्यायालयों को भी ध्यान में रखना चाहिये। उनके अनुसार, आधुनिक कानूनों में सन्देह की अवस्था में, न्यायालय को ऐसा अर्थान्वयन अस्वीकृत कर देना चाहिये जो, *किसी वर्ग विशेष*–***class privilege*** को अप्रत्यक्षतः करछूट का विस्तार करता हो। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि कर का दायरा बढ़ाते हुये कर अधिकतम व्यक्तियों पर लगाना चाहिये जिससे प्रतिव्यक्ति कर भार न्यूनतम हो।

केप ब्रान्डी सिंडीकेट v. आई0आर0सी0 1921; आई0आर0सी0 v. सौन्डर्स 1958; टेनान्ट v. स्मिथ 1892; आई0आर0सी0 v. डयूक ऑफ वेस्ट मिनिस्टर 1936; मेप v. ओराम 1969; सी0डब्ल्यू0टी0 अहमदाबाद v. एलिस जीमखाना 1998; माथुराम अग्रवाल v. म0 प्र0 राज्य 2000; कपिलमोहन v. दिल्ली आयकर आयुक्त 1999; तारूलता श्याम v. सी0आई0टी0 1977 और कर्मचारी यूनियन आगरा v. भारतसंघ 2000[117] आदि वादों के निर्णयसार को ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि कर विधियों के निर्वचन में न्यायालय को केवल यह देखना होता है कि उनमें स्पष्ट रूप से क्या लिखा गया है। *अप्रत्यक्ष आशय, अभिप्राय, अवधारणा, आवश्यकता, असुविधा, अन्याय, भावना, तर्क, दमन, साम्या, नैतिकता* आदि के

आधार पर उनकी भाषा की खींचतान नहीं की जा सकती। कर कानून की कमी को विधायन द्वारा ही दूर किया जा सकता है। न कि न्यायिक निर्वचन द्वारा।

आई0आर0सी0 v. फिशर्स एक्जीक्यूटर्स 1926 और केल्विनेटर ऑफ इण्डिया लि0 v. हरियाणा राज्य 1973[138] में यह कहा गया यदि कोई करदाता वैध रूप से–किसी कर विधि के प्रावधान या लोप का लाभ उठाने के लिये चतुराई से अदायगी को इस प्रकार व्यवस्थित करता है कि उस पर कर न लग पाये या कर–कम लगे तो इसमें कुछ भी अवैध नहीं है। उसे ऐसा करने की छूट है।

आयकर आयुक्त, पंजाब v. के वि0 टि0 कं0 1970[139] में आयकर आयुक्त के नोटिस पर प्रत्यर्थी ने 1955 के रिटर्न–आयकर विवरणिका को 1956 में दाखिल किया और बैंक के दो वर्षों में आय में घाटा भी दिखाया। आयकर आयुक्त का कहना था कि घाटा नहीं दिखाया जा सकता क्योंकि रिटर्न समयावधि उपरान्त दाखिल किया गया है। परन्तु न्यायालय ने निर्णय दिया कि आयकर अधिनियम की धारा 34(3) और 22(3) में रिटर्न दाखिल करने की सीमा अवधि निश्चित नहीं है अतः सन्देहावस्था में कर विधि का निर्वचन करदाता के पक्ष में किया जाता है चाहे ऐसे निर्वचन से राज्य–आयकर विभाग को कितनी ही हानियाँ–असुविधा क्यों न हो।

एटलस साइकिल इन्डस्ट्रीज लि0 v. हरियाणा राज्य 1972[140] में नगरपालिका में नये क्षेत्र जोड़कर वहाँ "नियम, विनियम, आदेश निदेश एवं सत्ता" लागू कर दिये गये। इस नियमावली में अधिसूचना शब्द नहीं था। अतः अधिसूचना द्वारा कर लगाना अवैध घोषित कर दिया गया।

भारतसंघ v. वाणिज्यिक कर अधिकारी 1956[141] में बंगाल वित्त (विक्रयकर) अधिनियम 1941 की धारा 5(2) भारत सरकार के भण्डार विभाग, वितरण विभाग, रेल और जल परिवहन को बेचे गये सामान पर बिक्री कर की छूट प्रदान करती है। प्रस्तुत वाद में माल भारत सरकार के उद्योग मंत्रालय को बेचा गया। न्यायालय के निर्णय के अनुसार, उद्योग विभाग के बेचे गये माल पर बिक्रीकर की छूट प्रदान नहीं की गई क्योंकि उद्योग विभाग का स्पष्ट उल्लेख उक्त अधिनियम की उक्त धारा में नहीं किया गया है।

3. कलेक्टर ऑफ एस्टेट ड्यूटी v. कनक सहाय 1973[142] में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्णित किया कि "संदेह और छूट" की अवस्था में यथासम्भव, निर्वचन करदाता के पक्ष में किया जाना चाहिये।

आई आर0 सी0 v. एफ0 एस0 सिक्योरिटीज लि0 1964[143] में विसकाउन्ट रेडक्लिफ ने कहा कि विधानमंडल स्पष्टतः दोहरा कर आरोपित करने में सक्षम है परन्तु जहाँ यह संदेह हो कि दोहरा कर लगाया गया है या नहीं तो सन्देह का लाभ करदाता को देकर उसे दोनों करों से बचाना चाहिये।

जैन ब्रादर्स v. भारतसंघ 1970[144] में यह अभिनिर्णित किया गया कि आयकर अधिनियम 1961

की धारा 23(5) वैध है यद्यपि यह स्पष्टतः दोहरा कर लगाती है।

सेन्ट्रल एक्साइज कलेक्टर v. अम्बालाल साराभाई 1990[125] और इण्डियन केबल कं0 लि0 v. सेन्ट्रल एक्साइज कलेक्टर 1995[126] में यह अभिनिर्णित हुआ कि दोहरी एक्साइज डयूटी भी आरोपित की जा सकती है। परन्तु यदि माल बिकाऊ नहीं है–केवल उत्पादित किया गया है तो एक्साइज डयूटी नहीं लगेगी।

लक्ष्मी अम्मल v. माधव कृष्णन 1978[127] में यह निर्णित हुआ कि यदि कोर्टफीस अधिनियम के प्रावधान में संदिग्धता हो कि पक्षकारों को कम फीस देनी है या अधिक तो कम फीस अदा करने के निर्वचन के नियम को अपनाया जायेगा।

नगरपालिका परिषद v. टी0टी0 देवास्थानम 1974[128] में अभिनिर्णित किया गया है कि यह सिद्ध करने का भार राज्य–प्राधिकारी का है कि वाद विशेष में व्यक्ति विशेष कराधान सीमा के अन्तर्गत आता है या नहीं। दूसरी ओर, यदि करदाता कर से छूट पाना चाहता है या सम्बन्धित कर विधि में सन्देह का लाभ लेना चाहता है तो सिद्ध करने का भार करदाता का ही होगा।

कर्कनेश v. जॉन हडसन एंड कं0 1955[129] में लार्ड सभा ने यह निर्णित किया कि कर अदायगी न होने पर सरकार को सम्पत्ति बेच देना तथ सम्पत्ति का अनिवार्य अधिग्रहण एक ही बात नहीं होती यद्यपि परिणाम एक ही होता है।

C- अपवाद

कर विधियों के कठोर निवर्चन से यह तात्पर्य नहीं है कि कर कानून स्पष्टतः उदार–होने पर भी उनका निर्वचन कठोर ही किया जाये।

आयकर आयुक्त v. मै0 स्ट्रॉ बोर्ड उत्पाद कं0 1989,

आयकर आयुक्त v. शान फाइनांस प्रा0 लि0 1998,

आयकर आयुक्त v. उ0 प्र0 सहकारी संघ लि0 1989,

गुजरात औद्योगिक विकास निगम v. आयकर आयुक्त 1997[130] वादो में यह अभिनिर्णित किया गया कि यदि राज्य करों में उदारता पूर्वक छूट देता है–अर्थात, कर कानून का उद्देश्य औद्योगिक क्रियाकलाप को बढ़ावा देना है या आधुनिक मशीनरी का प्रयोग करना हो या सहकारी आंदोलन को प्रोत्साहन देना हो या लोक कल्याण के लिए विकास कार्य हेतु करों में छूट का स्पष्ट प्रावधान हो तो कर विधियों का निर्वचन भी उदार किया जायेगा।

Scanned with CamScanner

D- कपटपूर्ण कर चोरी और निर्वचन

कर विधियों के निर्वचन से सम्बन्धित कठोर निर्वचन नियम का दूसरा नया पहलू यह भी है कि कर की अवैध या कपटपूर्ण चोरी की अनुमति नहीं है। कर चोरी करने वालों से पिछले कर के साथ-साथ अन्य अतिरिक्त आर्थिक दंड भी वसूल किया जा सकता है। इसीलिये प्रायः अधिकांश कर विधियाँ भूतलक्षी होती हैं। कर चोरी से अन्य ईमानदार कर दाताओं पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ पड़ता है।

कर चोरी के विरूद्ध सम्भवतः सर्वप्रथम आवाज लार्डग्रीन ने-लार्ड होवर्ड डेवलइन v. कमिश्नर ऑफ इन्लेन्ड रेवेन्यू 1942 में और विस्काउन्ट साइमन ने-लाटीला v. आई0आर0सी0 1943[131] में उठाई थी। ग्रीन का कहना था कि हमें यह खोजने में कोई क्षोभ नहीं होगा कि विधायी आशय करचोरी की जनप्रवृत्ति पर सख्त आर्थिक दंड आरोपण करके उसके दमन का होता है। अन्ततः कराधान एक तरीके से दांडिक प्रावधान ही होते हैं। सी0आई0टी0 मद्रास v. मीनाक्षी मिल्स, मदुरई 1967 और गुजरात इन्कम टैक्स कमिश्नर v. ए0 रमन एण्ड कं0 1968[132] में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने ऐसे ही निर्णय दिये हैं।

मै0 मेक्डोवेल एंड कं0 लि0 v. सी0टी0ओ0 1986[133] के वाद में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया कि कर चोरी के छद्म तरीके करयोजना के अंग नहीं होते। न तो उचित है और न ही आशा की जाती है कि विधानमंडल कर चोरी के प्रत्येक तरीके को बताये। यह न्यायालय का कार्य है कि निर्वचन के नयी तकनीकियों की सहायता से करचोरी के नये तरीकों को विनिश्चय करे।

धनकर आयुक्त v. कृपाशंकर 1971[134] में प्रत्यर्थी ने न्यास विलेख द्वारा स्वयं को स्वयं की कुछ सम्पत्ति का न्यासी घोषित करके अपने बाल बच्चों के भरण-पोषण का प्रबन्ध कर लिया और भारतीय न्यास अधिनियम 1882 के अन्तर्गत कर मुक्त होना चाहा। परन्तु न्यायिक निर्णयानुसार उसे धनकर अधिनियम 1957 की धारा 21 के अन्तर्गत धनकर अदा करना पड़ा। इस धारा में स्पष्ट उल्लेख है कि न्यासी उसी प्रकार और उसी सीमा तक धनकर की अदायगी को बाध्य है, जिस प्रकार वह व्यक्ति, जिसकी ओर से सम्पत्ति धारण की गई है, होता। यह कर चोरी का छद्म तरीका है।

कर चोरी को रोकने के लिए अपवादिय स्थितियों में न्यायालय संव्यवहार के तरीकों-शब्दों के स्थान पर उसके सार-तत्व पर विचार कर सकता है। उदाहरण के लिए कमिश्नर ऑफ कस्टम एण्ड एक्साइज v. एच0जी0 किवले लिमिटेड 1965 और विजड्म v. चेम्बरलेन[135] वादों में यह निर्वचित किया गया कि ब्रिटिश वित्तीय अधिनियम 1956 के अन्तर्गत फर्नीचर के अलग-अलग हिस्से जो भण्डार घर में कठौते-किट में पड़े हों, भी फर्नीचर हैं और उनपर भी फर्नीचर मद में